International Journal of Social Research and Development
www.socialsciencejournal.net
Online ISSN: 2664-8709
Received: 29-12-2025, Accepted: 28-01-2026, Published: 12-02-2026
Volume 8, Issue 1, 2026, Page No. 42-48

भारत में पंचायती राज की उपयोगिता और चुनौतियाँः एक विश्लेषण

मधुलिका कुमारी
शोधार्थी, वाणिज्य एवं व्यवसाय प्रशासन विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

सारांश
पंचायती राज व्यवस्था में निहित मूल धारणा गांवों में निचले स्तर पर विकास से जुड़ी योजनाओं को मूर्त रूप देकर ग्रामीण लोगों को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में प्रोत्साहित करना तथा अपनी दैनिक आवश्यकताओं के लिए जिला प्रशासन, राज्य तथा केन्द्र सरकार का मुंह ताकने की प्रवृत्ति से छुटकारा दिलाना है, तथा निचले स्तर पर जनता का प्रत्यक्ष रूप से सहयोग प्राप्त करना एवं शासन व्यवस्था में उनकी भागीदारी को सुनिश्चित करना है। स्वतंत्र भारत के संविधान के अनुच्छेद 40 में राज्यों को पंचायतों के गठन का निर्देश दिया गया। इसके साथ ही संविधान की सातवीं अनुसूची (राज्य सूची) की प्रविष्टि 5 में ग्राम पंचायतों को शामिल करके इस संबंध में कानून बनाने का अधिकार राज्यों को दिया गया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद गांधीजी के सिद्धांत के अनुकूल पंचायती राज व्यवस्था पर विशेष बल दिया गया और इसके लिए केन्द्र में पंचायती राज एवं सामुदायिक विकास मंत्रालय की स्थापना की गई।
पंचायती राज ने ग्रामीण सामाजिक संरचना में परिवर्तन में सहयोग प्रदान किया है। अब लोग विकास कार्यों में भाग लेने व विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में संबन्धित असफलताओं को उजागर करने तथा आलोचनात्मक दृष्टिकोण अपनाने लगे हैं। पंचायती राज संस्थाओं ने ग्रामीणों में उत्तरदायित्व की भावना जाग्रत करने में योग दिया है। सरकार द्वारा बनाए गए विकास एवं निवारण कार्यक्रमों को स्थानीय स्तर पर लागू करने तथा उससे अपेक्षित परिणाम दिखाने में पंचायती राज संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। ग्रामीण क्षेत्रों में संचालित कल्याणकारी योजनाओं और विकास कार्यक्रमों को चलाने की जिम्मेदारी जिला पंचायत, जनपद पंचायत और निचले स्तर पर ग्राम पंचायत की है। ग्राम पंचायतों को चाहिए कि वे कानून से मिले अधिकारों के अन्तर्गत अपने कार्यक्षेत्र के गांवों के विकास तथा ग्रामीणों की भलाई के लिए इन सभी योजनाओं और कार्यक्रमों को अच्छी तरह से संचालित करें।

मुलशब्दः पंचायती राज, लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण, स्थानीय प्रशासन, सूचना का अधिकारः, वित्तीय जवाबदेही

भारत में पंचायती राज का प्रारंभ प्राचीन काल से ही हो गया था यहाँ प्राचीन सस्थाओं से सम्बन्धित अवधारणा को ही परिवर्तित रूप से प्रस्तुत किया गया है। पंचायती राज शब्द का अस्तित्व स्वतन्त्र, भारत में श्री बलवंत राय गोपाल मेहता के लोकतान्त्रिक–विकेन्द्रीकरण प्रतिवेदन से उदय हुआ। वास्तव में पंचायती राज शब्द हिन्दी भाषा के दो शब्दों 'पंचायत' और 'राज' से मिलकर बना है। जिसका सम्पूर्ण अर्थ होता है–पाँच जन प्रतिनिधियों का शासन। परन्तु, पंचायती राज की अवधारणा के सम्बन्ध में राजनैतिक विचार तथा लोक प्रशासन के विचारों में एक मत नहीं रहा है। वर्तमान में विभिन्न प्रकार की पंचायती राज अवधारणाएँ हैं जो राजनीतिक नौकरशाही तथा सामाजिकता से संबंधित है। पंचायती राज ग्रामों तक राजनीतिज्ञों के बीच अनुकूलता स्थापित करने के लिए लोकतन्त्र का विस्तार है इसी प्रकार नौकरशाही पंचायती राज को स्थानीय स्तर तक प्रशासन का विस्तार मानती है। पंचायती राज एक अवधारणा जो गाँधीवादी समाज कार्यकर्ताओं से सम्बन्धित है, अर्थात् पंचायती राज सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में जनभागीदारिता प्राप्त करने से सम्बन्धित है।

पंचायती राज का अर्थ

जिस व्यवस्था में देश के समस्त नागरिक शासन के कार्यों में किसी न किसी स्तर पर भाग लेते हैं और उनकी आवाज अनिवार्यतः कुछ महत्व रखती हो, उसे सच्चा लोकतंत्र कहा जाता है। जब राज्य की सत्ता केन्द्र में निहित होती है तो उसे केन्द्रीय शासन कहते हैं जब यही सत्ता जनता में विभिन्न स्तरों पर बांट दी जाती है तो इसे विकेन्द्रीकृत सत्ता कहते हैं। वस्तुतः लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण शासन की शक्तियों का नौकरशाही के विभिन्न स्तरों तक प्रत्यायोजन नहीं है अपितु लोकतान्त्रिक सत्ता का राष्ट्रीय स्तर से नीचे राज्य, जिला, विकास खण्ड एवम् ग्राम स्तर पर विकेन्द्रीकरण के द्वारा निर्णय करने की अधिकतम शक्ति जनता में निहित हो तभी सच्चा लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण हो सकता है।
लोकतन्त्र एक जीवन–दर्शन है। राजनीति में इसके प्रयोग की अवधारणा में इसवे। विकेन्द्रीकरण के विचार भी अन्तर्निहित हैं। राजनीति में लोकतन्त्र के प्रयोग का अभिप्राय ना केवल राजसत्ता में लोगों की भागीदारी का प्रयास है बल्कि सरकार के दैनिक कामकाज में लोगों को सहभागी बनाना भी है। लोगों की सहभागिता लोकतन्त्र का हृदय स्थल है। जिस व्यवस्था में सरकार के संचालन में लोगों की सहभागिता जितनी अधिक निरन्तर, सक्रिय रचनात्मक और निकट होगी वह व्यवस्था लोकतन्त्र के राजनैतिक आदर्श के उतनी ही नजदीक समझी जाती है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण लोगों की सहभागिता प्राप्त करने का एक सशक्त उपाय है, इसका ध्येय शासन कार्यों में लोगों की अधिकतम और जीवन की सहभागिता को सुनिश्चित करना होता है यह जिज्ञासा का विषय है कि लोकतन्त्र की अवधारणा में जब बिकेन्द्रीकरण का विचार अन्तनिहित है तो विकेन्द्रीकरण के प्रारम्भ में लोकतान्त्रिक शब्द क्यों लगाया जाता है। विद्वानों ने मत व्यक्त किया है कि विकेन्द्रीकरण के पूर्व लोकतान्त्रिक शब्द का उपयोग निरर्थक नहीं है वस्तुतः लोकतान्त्रिक शब्द विकेन्द्रीकरण के उद्देश्यों कों अभिव्यक्त करता है जो सत्ता के विकेन्द्रीकरण में लोगों के व्यापक, अधिकतम और निकटतम सहयोग की आकांक्षाओं को अधिक स्पष्टता देता है। लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण को स्थानीय स्तर पर लोगों का अपने कल्याण की योजनाओं को बनाने तथा स्वायत्ततापूर्वक उन्हें क्रियान्वित होने के रूप में देखा जा सकता है।
लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण की तुलना में अधिक व्यापक है लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण जहाँ लोगों की सहभागिता पर बल देता है। वहीं प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण का उद्देश्य कुशलता को बढ़ावा देना होता है बहुत से लोग लोकतान्त्रिक–विकेन्द्रीकरण के विचार को प्रत्यायोजन के

समानार्थक समझकर भ्रमित होते हैं। प्रत्यायोजन में सत्ता का अधिकार उच्च अधिकारी द्वारा अधीनस्थ अधिकारी को स्थानान्तरित होता है वो उस सत्ता के उपयोग के लिए इच्छा के अनुरूप स्वतन्त्र नहीं होता, अपितु उसका निर्वाह उच्चाधिकारियों के निर्देशों और प्रसाद की सीमाओं के अन्तर्गत करना होता है जबकि लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण, लोकतान्त्रिक सिद्धान्त का विस्तार है, इसमें स्थानीय स्तर पर लोगों का अपने कार्यों को बिना किसी के हस्तक्षेप के उपयोग करने का अधिकार निहित है। इस प्रकार लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण के विचार में वहाँ के लोगों का अधिकार अन्तनिर्हित देखा जा सकता है। वहाँ प्रत्यायोजन उच्च अधिकारी द्वारा अधीनस्थ अधिकारी को प्रदत्त सुविधा मात्र है लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण एक ऐसा सिद्धान्त है जो स्थानीय लोगों को मौलिक सत्ता के उपयोग का अधिकार प्रदान करता है जबकि प्रशासनिक प्रत्यायोजन, किसी भी प्रशासनिक संगठन में प्रशासनिक कुशलता प्राप्त करने का उपागम मात्र है। इस प्रकार लोकतान्त्रिक व्यवस्था में यह अपेक्षा की जाती है कि शक्तियों का इस प्रकार वितरण या विकेन्द्रीकरण किया जाये कि लोग अपने मामलों को अपने सक्रिय हस्तक्षेप द्वारा स्वयं निपटा सकें। अर्थात् राजनीतिक व्यवस्था के आधार स्तर पर जनभागीदारी हो। अतः यह आवश्यक है कि ऊपर से नीचे के स्तरों पर सता का इस प्रकार विकेन्द्रीकरण हो कि स्थानीय शासन की इकाइयों उसी क्षेत्र के लोगों के सहयोग से अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करें। लोकतन्त्र को वास्तविक रूप देने हेतु जनता को राजनीति व प्रशासन में अधिकाधिक साझेदार बनाया जाए राष्टीय स्तर पर लोकतन्त्र स्वस्थ एवं सुदृढ रूप में तभी सफल हो सकता है यदि स्थानीय स्तर पर लोकतान्त्रिक संस्थाओं को भी पूर्ण प्रोत्साहन व पूर्ण सहयोग दिया जाये लोगों की राजनीति व प्रशासन में सहभागिता में वृद्धि का सर्वोतम उपाय यह है कि विभिन्न स्तरों पर पदों को शक्तिशाली बनाया जाये जोकि विकेन्द्रीकरण में निहित है। अत ग्रामीण सहभागिता में वृद्धि आवश्यक है।

पंचायती राज का दर्शन

भारत में ग्रामीण स्थानीय प्रशासन और ग्राम–विकास के सन्दर्भ में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण अर्थात् पंचायती राज का विशेष महत्व है जिसके माध्यम से जनता में सहयोग, उत्तरदायित्व, स्वावलम्बन आदि गुणों का विकास सम्भव है। पंचायती राज व्यवस्था पर संविधान निर्माण के बाद से लेकर आज तक पर्याप्त चिन्तन हुआ है लेकिन उतना अधिक चिन्तन इसके दार्शनिक पक्ष को लेकर नहीं हुआ। ऐसा केवल पंचायती राज के साथ ही नहीं बल्कि सभी विषयों के साथ होता है वास्तव में दर्शन शब्द ही अपने आप में जटिल तथा अनुपयोगी माना जाता है जबकि दर्शन–मानव–चिन्तन का उत्कृष्ट स्वरूप है। दर्शन को परिभाषित करते हुए मॉर्शल डिमोंक कहते हैं कि, "यह विश्वासों और व्यवहारों का वह समूह है जिसका उद्देश्य व्यक्तियों और संस्थाओं के कार्यों में उत्तमता प्राप्त करना है।"

पंचायती राज संस्थाओं की उपयोगिता

पंचायती राज संस्थाओं का स्थानीय स्तर पर बहुत महत्व पाया जाता है। प्रांस के विद्वान टाकबिल का कहना है कि स्थानीय समितियों स्वतंत्र राष्ट्र की शक्ति है। कोई राष्ट्र स्वतंत्र शासन की स्थापना कर सकता है, किन्तु स्थानीय संस्थाओं के उत्साह के बिना उसमें स्वंतत्रता की भावना अत्पन्न नहीं हो सकती। पंचायती राज संस्थाओं से शासन कार्य में कुशलता की वृद्धि होती है। पंचायती राज शब्द हिन्दी भाषा के दो शब्दों पंचायत और राज से मिलकर बना है, जिसका अर्थ है पाँच जनप्रतिनिधियों के समूह का शासन। एक प्रसिद्ध कहावत भी है– पाँच पंच मिल कीजै काजा, हारे जीते होई न लाजा। अर्थात् पैंचों के निर्णय में हार अथवा जीत में लज्जा या शर्मिंदगी नहीं होती है। पंचायती राज संस्थाओं की उपयोगिताएँ निम्नलिखित बिन्दुओं से स्पष्ट होता है:

- **लोकतंत्र की पाठशालाः** प्राचीन काल में आमतौर पर पढ़े–लिखे और अनुभवी लोगों को ही पंचायत के सदस्य या पंबायत के पंचों के रूप में चुना जाता था। लगभग सभी धर्मनिरपेक्ष मामलों में इसका नियंत्रण रहता था। फिर भी यदि कोई विवाद उठता था और सांसारिक नियमों के उल्लंघन के लिए कोई दंड देने का प्रश्न आता था तो वह मामला पंचायत के पास भेजा जाता था। इस प्रकार एक तरह से सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए पंचायत एक संस्था थी, जो एक गाँव में रहने वाले लोगों के जीवन को नियंत्रित करती थी पंचायती राज आज केन्द्र और राज्य के एकमात्र नियंत्रण में नहीं रहा है। आम जनता इस व्यवस्था की अंग बन चुकी है पंचायती राज व्यवस्था में गाँव के विभिन्न व्यक्तियों का समावेश हो गया है। इसी आधार पर पंचायतों को सही अर्थ में लघु गणराज्य कहा गया है। शासन प्रणाली वा सर्वश्रेष्ठ रूप में अर्थात् लोकतंत्र की जमीनी स्तर पर स्थापना पंचायती राज के माध्यम से ही संभव हुई है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की मूर्तरूप पंचायती राज संस्थाओं ने निर्धन, निरक्षर, असंगठित्त तथा उपेक्षित ग्रामजनों को आवाज एवं जुबान दोनों ही दी इसीलिए स्थानीय संस्थाएँ अर्थात् पंचायती राज लोकतंत्र की पाठशाला मानी जाती है।

- **सत्ता का वास्तविक विकेन्द्रीकरणः** आज पंचायती राज व्यवस्था में वास्तविक विकेन्द्रीकरण दिख रहा है। क्योंकि पंचायती राज व्यवस्था ने समाज में एक नई जागरूकता पैदा की है और पचायत प्रतिनिधियों के रौबीले तेवरों से अब संसद और विधान सभा के सदस्य भी घबराने लगे हैं। सत्ता के विकेन्द्रीकरण के क्षेत्र में भारत में जो प्रयोग हो रहे हैं वे दुनिया में सबसे व्यापक पैमाने पर मजबूत उदाहरण है। जहाँ एक और संसद में महिला आरक्षण का प्रश्न एक जटिल समस्या बन कर रह गया है, वहीं पंचायत स्तर पर हो रहे प्रयोग ने एक चमत्कार कर दिया है। पंचायत स्तर पर लगभग सभी राज्यों ने 50 प्रतिशत आरक्षण दे दिया है यही कारण है कि सत्ता का वास्तविक विकेन्द्रीकरण हो गया है।

- **राजनैतिक नेतृत्व की प्रारंभिक इकाईः** पंचायती स्तर पर काम करने वाले प्रतिनिधी धीरे–धीरे पंचायत से आगे बढ़कर बड़े पदों पर पहुँचते है। पंचायतों में काम करते हुए पंचायत प्रतिनिधियों को स्वतः ही उत्तम प्रशिक्षण प्राप्त हो जाता है, जिसका उपयोग वे भविष्य में नेतृत्व के उच्चतर सोपानों पर कर सकते हैं। राजनीतिक नेतृत्व की शुरूआत पंचायत स्तर से होनी बाहिए तथा राजनीतिक दल के प्रत्येक सदस्य की प्रोन्नति विभिन्न पंचायतों के स्तर पर उसके कार्य के अनुसार होनी चाहिए, जैसे सरकारी अधिकारियों की प्रोन्नति उनके वार्षिक चरित्र आकलन के आधार पर होती है। सेवानिवृत्त न्यायमूर्ति श्री वी.आर. अय्यर ने कहा था कि स्थानीय स्वशासी इकाइयों के प्रति संस्थागत न्याय हमारे विकेन्द्रीकृत लोकतंत्र तथा हमारी आर्थिक धरोहर का आधारभूत तत्व है। तब इस विचार को क्यों ठुकराया जाता है और गाँधीवादी सिद्धान्त की बलि क्यों दी जाती है? उसका उत्तर है सत्ता हथियाने कहीं शासक दल के हाथ से निकलकर विपक्ष के हाथ न चली जाए। गणराज्य तब कैसे कायम रहेगा, जब सत्ता के लिए झगड़ों में उलझी पार्टियों की नींव रेत पर टिकी हो। लोगों के लिए दल होना चाहिए,

किन्तु यदि दल के लिए लोग सिद्धान्त पर हावी हो जाए तो इससे विकास को झटका लगता है। इस प्रकार पंचायती राज की इकाई प्रांरभिक स्तर पर नेताओं को राजनीति की शिक्षा देती है।

- **समस्याओं का स्थानीय स्तर पर ही निपटारा:** पंचायती राज संस्थाओं की प्रमुख विशेषता यह है कि स्थानीय लोगों की सक्रिय सहयोग से कोई भी योजना शुरू करने पर उसके माध्यम से वहाँ की समस्याओं को सुलझाया जा सकता है। आम लोगों की समस्याओं की उसे निकट से जानकारी होती है। स्थानीय स्तर पर आवश्यकताओं का पता लगाना तथा कार्यक्रमों पर अमल करना तथा प्रशासनिक इकाइयों से सहायता लेना ज्यादा आसान रहता है, इसीलिए समस्याओं का स्थानीय स्तर पर ही हल निकल जाता है।

- **योजना तैयार करने में:** पंचायती राज संस्थाएँ नीचे से योजना तैयार करने के लिए संस्थागत अनुभव सुविधा प्रदान करती हैं। वे ग्राम, ब्लॉक तथा जिला स्तरों पर एक दूसरे से जुड़ी हुई ऐसी लोकतान्त्रिक तथा लोकप्रिय संस्थाएँ उपलब्ध कराती है, जिनमें ग्राम पंचायतों, पंचायत समितियों तथा जिला परिषदों के जन प्रतिनिधि सरकार की प्रशासनिक तथा विकासशील एजेंसियों के अधिकारियों के साथ मिलकर क्षेत्र के विकास के लिए कार्य करते हैं, इसीलिए पंचायती राज संस्थाएँ निचले स्तर से कार्य करने में सक्षम होती है।

- **स्थानीय प्रशासन:** विद्यालयों की देखरेख, जल प्रबंधन, सड़कें, स्वास्थ्यप्रद स्थलों का रखरखाव गाँव की साफसफाई स्वास्थ्य अस्पतालों का नियंत्रण व संचालन आदि कार्य पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से दक्षतापूर्वक किया जाता है। जिला स्तर पर स्थित यदि किसी अधिकारी से गाँव की स्वच्छता या अस्पताल या स्कूल के संचालन के विषय में शिकायत दर्ज कराई जाए तो शिकायत पर कार्यवाही होते–होते शिकायत का उद्देश्य ही नष्ट हो जाएगा। सरकारी अधिकारी उस शिकायत को अधिक महत्व नहीं देगा क्योंकि वह उससे सीधा प्रभावित नहीं होता है, जबकि यही शिकायत यदि जिला स्तर पर ग्राम पंचायत में की जाए तो उसका तत्काल समाधान खोजा जा सकता है। अतः स्थानीय प्रशासन में कुशलता रहती है।

- **श्रम–दान को प्रोत्साहन:** स्थानीय स्तर पर कार्यान्वित योजनाओं में जनसहयोग स्वतः ही प्राप्त हो जाता है। लाभार्थियों की आस–पास के कार्यों में रुचि बढ़ती है। उन्हें परस्पर सहयोगपूर्वक काम करने से नागरिक जीवन में उचित शिक्षा एवं अनुभव प्राप्त होता है।

- **पारदर्शिता:** पंचायतों के कायों में पारदर्शिता समाहित होती है। जिस दिन कोई योजना पंचायत की उप–समिति के सामने पेश की जाती है, उस दिन ही योजना के विषय में जानकारी उस गाँव, अचवा मोहल्ले तक पहुँच जाती है। बजट तथा विकास योजनाओ की सूचना पंचायत नोटिस बोर्ड द्वारा निर्णायक मंडली तथा लाभकारियों तक सहज ही पहुँच जाती है, इसीलिए पंचायती राज व्यवस्था में पारदर्शिता स्पष्ट दिखाई देती है।

- **स्थानीय लोगों की भागीदारी:** पंचायती राज प्रणाली के द्वारा योजना में लोगों की भागीदारी से योजना के और सक्षम तथा बेहतर होने की आशा की जाती है। स्थानीय लोगों का अपनी आवश्यकताओं के बारे में बेहतर दृष्टिकोण होता है तथा स्थानीय संसाधनों के संबंध में उन्हें बेहतर जानकारी होती है। इसके अतिरिक्त एक गाँव के अन्दर तथा पड़ोसी गाँवों के बीच विभिन्न कार्यकलापों में संघावित सम्पर्कों के बारे में उन्हें जानकारी होती है। योजना में इस प्रकार की सहभागिता से लोगों के अधिकारों तथा दायित्वों के बारे में उनकी जागरूकता के स्तर को उठाने का अतिरिक्त लाभ होता है।

- **जनसंख्या रोकने में सहायक:** संघीय स्तर पर केन्द्र सरकार, प्रान्तों में राज्य सरकार तथा स्थानीय स्तर पर नगरीय संस्थाएँ एवं पंचायती राज स्थापित कर देश में प्रशासन का त्रिस्तरीय ढांचा अपनाया गया है। इन सभी स्तरों पर भारत में जनसंख्या नियंत्रण के लिए कारगर उपाय किए जा रहें है। ये संस्थाएँ क्योंकि आम ग्रामीण से जुड़ी हुई हैं अतः ये संस्थायें जनसंख्या विस्फोट जैसी विकराल समस्या पर नियंत्रण स्थापित कर सकती है और स्थानीय स्तर पर जनसंख्या नियंत्रण से संबंधित उपाय योजनाएँ चलती रहती है।

- **बालश्रम पर नियंत्रण:** गाँवों एवं शहरों में बाल श्रमिक विभिन्न खतरनाक एवं गैर–खतरनाक कायों में लगे हुए हैं। पंचायतें बालश्रम को रोककर उनकी शिक्षा पर ध्यान दे सकती हैं, जिससे उन्हें अपने एवं राष्ट्र के नागरिक के रूप में अधिकारों का ज्ञान हो जाए।

- **शराबबंदी पर कार्य:** शहरी क्षेत्रों में शराब के साथ–साथ गाँवों के लोगों को भी शराब की बुरी आदत लग चुकी है। शराब, तम्बाकू, भांग, गांजा का चलन तो गाँव में काफी समय से है, आजकल तो नए–नए नशे के साधन गाँव में पहुँच रहे हैं। नशे से हजारों घर–परिवार बर्बाद हो गए हैं और होते जा रहे हैं पंचायतें शराब की दुकानों एवं शराच बनाना बन्द करा सकती है। पंचायतों के माध्यम से गाँव–गाँव अभियान चलाकर नशाखोरी के विरोध में जन–जागरूकता फैलाने में काफी मदद मिल सकती है।

- **कुप्रथाओं की समाप्ति:** हमारे समाज में अनेक कुप्रथाओं का चलन है। इनके रहते अनेक परिवार एवं महिलाओं को कष्ट उठाने पड़ते हैं। महिलाओं को अनेक कारणों से सताया जाता है। उनके साथ मारपीट करना, बलात्कार करना, घर से निकाल देना आम बात है। पंचायतें ऐसे कार्यों पर रोक लगाने के उपाय कर सकती है। सामाजिक बहिष्कार कर सकती हैं। यदि समाज एवं पंचायत का नियंत्रण रहे तो ऐसे मामले कम किए जा सकते हैं। बाल विवाह, पत्नी को छोड़ देना, बूढ़े माता–पिता की देखभाल न करना, विवाह समारोह आदि पर अत्यधिक व्यय करना आदि। समस्याओं का निराकरण करके पंचायती राज संस्थाएँ आम लोगों का जीवन खुशहाल कर सकती है।

- **जात–पात व हुआछूत की भावना कम करना:** हमारे यहाँ विविध प्रकार की जातियाँ एवं धर्म हैं। इनमें तो कोई हर्ज नहीं परन्तु उनमें भेदभाव एवं ऊँच–नीच की बीमारी ज्यादा है। एक जाति दूसरी जाति के हाथ का कुआ अन्न–जल ग्रहण नहीं करती है। जात–पात, छोटे–बड़े, छुआछूत का भेदभाव रखने से गाँव में. एकता नहीं रहती है। चुनाव में अच्छे व्यक्ति को चुनना होता है परन्तु जात–पात का बोलबाला होने के कारण बोट डालते समय इन बातों का असर नजर आता है। हमारी पंचागतें जात–पात के भेदभाव को मिटाने के लिए अहम भूमिका अदा करके महत्वपूर्ण सहयोग दे सकती है।

इस प्रकार अनेक महत्व एवं उपयोगिताओं के कारण पंचायती राज का महत्व दिनोदिन बढ़ता जा रहा है।

पंचायती राज की चुनौतियाँ

1993 के पश्चात् पंचायती राज व्यवस्था को अनेक अधिकार संपन्न बना दिया गया है। भारत में पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से लोकतांत्रिक मूल्यों, महिला सशक्तिकरण, जनसंख्या नियंत्रण, ग्राम विकास योजना कार्यान्वयन तथा प्रशासन में जनसहभागिता जैसे कारकों को बल मिला है। 73 वें संविधान संशोधन के पश्चात पंचायती राज संस्थाएँ संगठनात्मक एवं संरचनात्मक रूप से स्थापित हो चुकी है। ये संस्थाएँ जिन कमियों से जूझ रही हैं, उनमें राजनीतिक विद्वेष, जातिवाद का प्रसार, वित्तीय संस्थाओं की कमी, ग्राम सभा की खानापूर्ति तथा समानांतर न्याय प्रणाली इत्यादि प्रमुख हैं। ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की इकाइयों के रूप में पंचायती राज संस्थाओं को अनेक अड़चनों एवं बाधाओं के रूप में चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। इन चुनौतियों का सामने करते हुए पंचायती राज संस्थाओं पर सशक्तिकरण किया जा रहा, जो निम्न प्रकार हैः–

- **चुनाव सुधार की आवश्यकताः** पंचायती राज व्यवस्था में पंचायत चुनावा की निष्पक्षता और विश्वसनीयता सुनिश्चित करना आवश्यक है। उनमें लोगों की भागीदारी पर्याप्त है और बहुधा संसदीय या विधानसभा चुनावों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक ही जनभागीदारी होती है। इन पंचायत चुनावों का निरीक्षण एवं देखरेख राज्य निर्वाचन आयोग करता है और केन्द्रीय निर्वाचन आयोग द्वारा कराए जाने वाले संसदीय और राज्य विधान सभा चुनावों की तुलना में राज्य स्तरों पर चुनाव की प्रक्रिया एवं कार्यों में अंतर होता है इसके लिए प्रत्येक पंचायती चुनावों में एक समान मतदाता सूची और इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन का सहारा लिया जा रहा है।

- **भागीदारी की चुनौतीः** ग्राम सभाओं में भागीदारी को बढ़ावा देना एक सतत चुनौती बनी हुई है। यदि ग्राम संभाएँ नगण्य बनी रहीं तो इन्हें प्रमुख कानूनी दर्जा देने का भी बहुत कम परिणाम प्राप्त होगा। उनकी समस्याओं को दूर करने के लिए एकजुट होने की लोगों की परोपकारी अवधारणा के प्रति संदेह है। यह भावना अब भी मौजूद है कि भद्र समूहों, सीमांत वर्गों और स्थानीय राजनीति में यह निचले स्तर पर कार्य नहीं करता है। वास्तविकता यह है कि भागीदारी में अवसरवादिता होती है, इसलिए पंचायती राज में भागीदारी को प्रासंगिक बनाने की चुनौती है ताकि इसे संवर्धन मुहैया कराने वाला माना आ सके।

- **वित्तीय विकेन्द्रीकरण की चुनौतियाँः** पंचायतों की सबसे बड़ी जरूरत उनके कार्यात्मक आदेश को पूरा करने की दृष्टि से वित्तीय सुद्दीकरण की है। निधियों की आधी–अधूरी सुपुर्दगी, पंचायतों के प्रभावी कामकाज की सबसे बड़ी चुनौती है। पंचायतों को केन्द्र और राज्य दोनों से निधियाँ मिल सकती है। पंचायतों के कार्यात्मक दायरे में आने वाले मामलों में केन्द्र द्वारा वित्त पोषण मौटे तौर पर राज्य योजनाओ के लिए अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता के साथ–साथ केन्द्र प्रायोजित योजनाओं के माध्यम से किया जाता है। इसकी पंचायतों की परिकल्पितः भूमिका को ध्यान में रखकर समीक्षा किए जाने और इन्हें सार्थक बनाए जाने की जरूरत है। लोगों की कर भुगतान की स्वेच्छा प्रणाली, पंचायतों की लोगों पर विश्वास करने की क्षमता को मापने वाला बैरोमीटर है। पंचायतों के वित्तीय मामलों में लोगों की समझ, इसका नियंत्रण एवं मानसिक गणना अत्यंत महत्वपूर्ण है। स्थानीय करारोपण की शक्ति सबसे अच्छा नियंत्रण है, जो जनता अपने निर्वाचित पंचायत प्रतिनिधियों को दे सकती है।

- **वित्तीय जवाबदेही की चुनौतीः** पंचायतों के आलोचकों द्वारा पंचायतों की आम आलोचना यह की जाती है कि वे उनकी निधियों के संबंध में काफी पिछड़े हुए हैं, इसलिए पंचायतों को वित्तीय प्रबंधन की एक टिकाऊ एवं प्रभावशाली प्रणाली बनाने की जरूरत है। पंचायत की वित्तीय प्रबंधन प्रणाली इतनी साधारण होनी चाहिए कि पंचायत का कम पढ़ा–लिखा कर्मचारी या ग्राम सभा का अशिक्षित सदस्य भी यह समझ सके और कह सके आप यहाँ गलत हैं। ऐसी प्रणाली तैयार करना किसी भी प्रकार से असंभव कार्य नहीं है, इसलिए अब मंत्रालय पीआरआई के लिए साधारण और आसानी से समझ आने वाली आडिट एवं लेखा मानकों को तैयार करने की दिशा में बढ़ रहा है, ताकि भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाया जा सके और अन्ततोगत्वा उसकी गुंजाइश को भी समाप्त किया जा सकें।

- **सूचना का अधिकारः** ग्रामीण निर्धन व्यक्तियों के अस्तित्व के लिए हुए संघर्ष से ही सूचना के अधिकार का आंदोलन भारत में शुरू हुआ तथा दूसरी और इस तथ्य को बिल्कुल नजरअंदाज किया जाता रहा है कि यह संघर्ष पंचायती राज संस्था के विकास संबंधी व्यय में पारदर्शिता लाने की मांग के साथ ही शुरू हुआ था। पूरे देश में आरटीआई अभियान को किसी अवधारणा के तहत एक लोकप्रिय नारा मिला है– हमारा पैसा, हमारा हिसाब, जो न केवल जनता द्वारा सूचना की मांग का संकेत है बल्कि यह स्वशासन को स्वीकार करने की मानसिकता से निकला हुआ तथ्य है। ऐसा समझा जाता रहा है कि पंचायती राज संस्थाओं के लिए ग्राम सभा सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधारों में से एक है। क्रियाशील भागीदारी तथा शक्तिशाली ग्राम सभाओं के उद्देश्य की पूर्ति के लिए हमेशा ही समस्या बनी रहीहै तथा यह बड़ी चुनौतियों में से एक बना रहा है। यह प्रत्यक्ष प्रमाण है कि जनता को सशका बनाने के लिए उसे स्वतंत्र रूप से आँकड़ों, सूचनाओं तथा विभिन्न उद्देश्यों पर निर्णय लेने संबंधी प्रक्रिया की जानकारी लेनी चाहिए। इसके लिए आरटीआई ग्राम सभा के संचालन के लिए कारगर उपाय है।

पीआरआई ने इन संस्थाओं को सही रूप देने की लिए मच उपलब्ध कराया है, जो शासन में भागीदारी के विभिन्न क्षेत्रों में आरटीआई के उपयोग से नागरिकों को सक्षम बनाता है। उदाहरण के लिए ग्राम सभा में सामाजिक लेखा–जोखा प्रक्रिया भी आरटीआई आंदोलन के साथ ही विकसित हुई है। यह उन सर्वोत्तम उदाहरणों में से एक है, जिसके तहत लोगो ने संस्थागत तथा लोकतांत्रिक ढांचे के तहत लेखांकन और वित्त नियंत्रण में भागीदारी की है। सार्वजनिक लेखा तथा सार्वजनिक सुनवाई आम जनता के लिए संस्थागत प्रणाली के रूप में स्वीकार की जा रही है, जिसके तहत जनता को प्रश्न पूछने, उत्तर प्राप्त करने, बोलने तथा सूचना प्राप्त करने के लिए मंच उपलब्ध होता है।

आरटीआई के उचित उपयोग से शासन में आये भ्रष्टाचार के खतरों को दूर किया जा सकता है तथा पी. आर. आई. को नियंत्रित रखा जा सकता है। स्वास्थ्य विकेन्द्रीकृत लोकतंत्र को सुनिश्चित करने के लिए आरटीआई एक जरूरी शर्त है। पीआरआई में आरटीआई के इस्तेमाल से विभिन्न संस्थाओं में भी व्यापक प्रभाव पड़ा है, जो इसका उदाहरण है। विकेन्द्रीकरण से संबंधित भ्रष्टाचार के लिए पीआरआई के तहत सम्यक प्रयोग में लाया जाता है तो या भ्रष्टाचार विरोधी अभियान के लिए अनुकूल

होगा तथा यह विकास की तरफ वास्तविक गति प्रदान कर सकेगा।

- **प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण की चुनौतियाँ:** संविधान के अनुच्छेद 243 जेडडी के तहत विभिन्न कार्यों की रूपरेखा, विभिन्न कार्यकलाप तथा वित्तीय कार्यान्वयन के लिए योजना दी गई है। स्थानीय सरकार के कार्यक्षेत्र के लिए विभिन्न योजनाओं तथा विकास परियोजनाओं के कार्यान्वयन के लिए ये एजेंसियाँ तथा संस्थाएँ राज्य या केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित् की गई है। इन संस्थानों की निर्णय प्रणाली, संसाधन संग्रहण तथा परियोजना कार्यान्वयन बिल्कुल भिन्न बनाया गया है, जिसे प्रायः पंचायती राज संस्था से स्वतंत्र एवं पृथक करते रखा जाता है। पंचायत स्तर पर चयनित संस्था के उदय के साथ ही एक हद तक समानांतर संस्था की प्रणाली कमजोर पड़ गई है। हालांकि, ये संस्थाएँ पंचायत में निर्णय लेने की प्रक्रिय। को प्रायः प्रभावित करती हैं तथा उसमें अपना अस्तित्व बनाए रखती हैं। पंचायती राज सुधारकों के समक्ष इन समानांतर संस्थाओं को अलग रखने तथा इन्हें सहायक एजेंसी के रूप में परिवर्तित करने की बड़ी चुनौती बनी हुई है। इन समानांतर संस्थाओं को अंगीकृत करते हुए पीआरआई के साथ सहअस्तित्व संबंध में आधार पर उचित स्तर दिया जाना चाहिए, तो ग्राम सभाओं को अनिवार्य प्राथमिकता के साथ कानूनी प्रावधानों के तहत समय–समय पर प्रतिवेदन देते रहें।

- **प्रभावहीन कानूनः** स्वंतत्रता के बाद में अनेक ऐसे उदाहरण हैं, जहाँ संवैधानिक स्वीकृति होने के बाद भी लोक स्वीकृति के अभाव के कारण संस्थायें प्रभावहीन तथा निष्क्रिय हो गयी, जिन्हें कालांतर में बंद कर दिया गया। ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारिता से जुड़ी संस्थाओं की नियति इसका उदाहरण है। इसी प्रकार दहेज, बाल विवाह, भ्रष्टाचार, बाल श्रम आदि अनेक विषयों पर कानून तो बने परन्तु लोक सहमति के अभाव के कारण वे प्रभावहीन रहे।

- **स्थायी कर्मचारी आवश्यकः** अधिकांश ग्राम पंचायतों में सिर्फ ढांचागत पदाधिकारी हैं। आम पंचायत स्तर पर पूर्णकालिक सुशिक्षित कर्मचारियों की अत्यंत आवश्यकता महसूस की जा रही है। इनमें एक पंचायत सचिव, एक क्षेत्र सहायक एक कार्यालय सहायक तथा एक एकाउंटेंट के साथ ही दूसरे विशेषज्ञों की एक टीम की भी जरूरत हैं, जिसमें इंजीनियर, जल संग्रहण प्रबंधन विशेषज्ञ तथा सार्वजनिक कार्यकलाप से संबंधित विशेषज्ञ रखे जाने की आवश्यकता है।

- **गैर–राजनैतिक संगठनों का प्रभावः** आज कल राजनीतिक दलों के साथ ही साथ कुछ गैर राजनैतिक संगठन भी प्रभावशाली होते जा रहे हैं। ये संगठन ग्रामीणों को आर्थिक समस्याओं को सुलझाने के लिए सरकार पर दबाव डालते हैं। इसके अलावा ये अनेक अवसरों पर आपसी विवादों को सुलझाने के लिए निर्णय सुनाते हैं तथा उन्हें लागू भी करवाते है। इन सबका उद्देश्य गाँव वालों की सुरक्षा, बेहतर कानून व्यवस्था तथा व्यावसायिक उन्नति से जुड़े विषयों की उपलब्धता सुनिश्चित करना होता है, इसलिए गाँव वालों में इन संगठनों के प्रति सम्मानित भाव विकसित हो रहा है, जो पंचायतों के लिए एक गंभीर चुनौती बनती जा रही है।

- **पंचायती राज संस्थाओं का सीमित दायित्वः** देश के कुछ प्रमुख स्वंयसेवी संगठनों ने पिछले दिनों हकीकत की तलाश में उत्तर भारत में पाँच उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, हरियाणा और पंजाब में पंचपरमेश्वर यात्रा का आयोजन किया। 400 किलोमीटर की इस यात्रा में सैकड़ों गाँवों में चर्चा और सर्वेक्षण के जरिए लोगों की राय ली गई। इसमें यह बात साफ उभर कर आई कि ग्रामीण विकास के जिन कार्यक्रमों का हस्तांतरण पंचायती राज संस्थाओं को होना था, वह नहीं हो पाया है।

इस यात्रा के दौरान यह भी पाया गया कि राज्य सरकार और प्रशासन के उदासीन रवैये के कारण पंचायती राज संस्थाओं की कार्य संस्कृति लोकतांत्रिक संस्था के अनुरूप नहीं ढल पाई और इनका स्वभाव सरकारी विभागों की तरह बन गया। जिला व क्षेत्र स्तर की पंचायतें मुख्य कार्यकारी अधिकारी के भरोसे ही चल रही हैं और जन प्रतिनिधियों में सिर्फ अध्यक्ष कर ही नाम मात्र का दखल होता है।

एक महत्वपूर्ण मसला यह भी पाया गया कि संविधान में 11 वीं अनुसूची के तहत जिन 29 विषयों को पंचायती राज संस्थाओं के के सुपुर्द किया गया, उनके कार्यों का विवरण अस्पष्ट बना हुआ है। स्पष्टता के अभाव में दायित्वों का वितरण सही तरीके से नहीं हो पाता और अधिकारों के लेकर खीचतान शुरू हो जाती है।

पंचायती राज कार्यक्रमों के उद्देश्यों को पूरा करने में नैतिक मूल्यों की भूमिका भी अहम् नजर आ रही है। राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण, प्रशासन को संवेदनशील बनाना, जन भागीदारी आदि इसकी सफलता के लिए आवश्यक है। अगर यह सब नहीं हुआ तो पंचायती राज को जनता द्वारा जनता के लिए बनाने पर प्रश्न चिन्ह लग सकता है।

पंचायती राज के उद्देश्यों की प्राप्ति के मार्ग में अनेक सामाजिक और प्रशासनिक समस्याएँ या बाधाएँ विद्यमान हैः

प्रशासनिक समस्याएँ

1. विकास सम्बन्धी गतिविधियों की आधारभूत इकाई क्या हो– खण्ड या जिला ?
2. पंचायती राज के कार्यों में अधिकारी वर्ग का स्थान तथा दायित्व क्या हो?
3. विकास कार्यों में जिला अधिकारियों का स्थान तथा दायित्व क्या हो?
4. पंचायती राज संस्थाओं तथा राज्य सरकारों में कैसे सम्बन्ध हों?
5. क्या पंचायती राज के कार्यों के मूल्यांकन के लिए कुछ विश्वसनीय कसौटियों हो सकती है?
6. पंचायती राज के अन्तर्गत विभिन्न सेवाओं के पदाधिकारियों को नियुक्ति किस प्रकार हो? एवं
7. पंचायती राज सम्बन्धी चुनावों में राजनीतिक दलों का व्यवहार कैसा हो?

सामाजिक समस्याएँ

1. जनता में साक्षरता का अभाव,
2. राजनीतिक चेतना का अभाव,
3. निःस्वार्थ नेतृत्व का अभाव,
4. जनता का आलस्य तथा उसकी क्रियाहीनता,
5. भारत का अलोकतान्त्रिक सामाजिक तथा पारिवारिक ढाँचा,
6. जातीय, धार्मिक तथा साम्यवादी निष्ठाएँ एवं
7. ग्राम समुदाय में शक्तिशाली वर्गों का कमजोर वर्गों (जैसे– अनुसूचित जातियों) पर प्रभुत्व।

अन्य समस्याएँ– इनके अतिरिक्त पंचायती राज की मुख्य समस्याओं में जन–प्रतिनिधियों में वांछित प्रशासनिक क्षमता का अभाव, नेतृत्व के गुणों का अभाव, जन–प्रतिनिधियों और प्रशासनिक अधिकारियों में समन्वय की कमी एवं संघर्ष की स्थिति, वित्तीय संसाधनों का अभाव, राज्य सरकारो की इन

संस्थाओं के प्रति उदासीनता की स्थिति तथा वित्तीय संसाधनों का दुरुपयोग जैसे तथ्यों को शामिल किया आ सकता है।

पंचायती राज व्यवस्था को अधिक प्रभावी और व्यावहारिक बनाने हेतु सुझाव

पंचायती राज व्यवस्था को सुदृढ़ और प्रभावशाली बनाने के लिए कतिपय निम्नलिखित कदम उठाये जा सकते हैं

- लोगों की आम समस्याओं को हल करने के लिए पंचायतों को अधिक अधिकार और आर्थिक संसाधन प्रदान किये जाये जिससे लोग अपनी तकलीफों को दूर कर समस्याओं का हल पा सकें।
- जिला स्तर के अधिकारियों को समूह भाव से काम करना चाहिए। उनका प्रमुख दायित्व जिला परिषद, पंचायत समितियों, खण्ड विकास अधिकारियों तथा विस्तार अधिकारियों की सरकारी नीतियों और निर्देशों के अनुसार तकनीकी दृष्टि से सुव्यवस्थित योजनायें बनाने में सहायता देना है। उन्हें प्रशासनिक और तकनीकी दृष्टि से इन योजनाओं के क्रियान्वयन की देख–रेख करनी है और आश्वस्त करना है कि विकास योजनाओ के लिए मूल रूप से आवश्यक सेवाएँ और वस्तुएँ समय पर तथा पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो सकें।
- कर्मचारियों की वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट उनके ठीक ऊपर के उस अधिकारी द्वारा लिखी जानी चाहिए जिसके अधीन वे कर्मचारी कार्य कर रहे है। इस रिपोर्ट को मुख्य कार्यपालक अधिकारी को प्रस्तुत किया जाना चाहिए।
- जिला परिषद के मुख्य कार्यपालक अधिकारी को कर्मचारियों में अनुशासन स्थापित करने और उनसे काम लेने के लिए प्रभावपूर्ण शक्तियाँ दी जानी चाहिए।
- ये परियोजनाएँ और कार्य जो जिले के विकास के लिए महत्वपूर्ण हो, राज्य स्तर से जिला परिषद को सौंप दिए जाने चाहिए, क्योंकि वे जिला परिषद स्तर पर अधिक कुशलता के साथ कार्यान्वित की जा सकती हैं।
- कुछ ऐसे कर्तव्य है जो विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया के समुचित विस्तार और इन संस्थाओं के क्रमिक विकास के रूप में राज्य स्तर से जिला परिषद को हस्तान्तरित किए जाने चाहिए, क्योंकि जिला परिषदें उनका निर्वहन अधिक अच्छे ढंग से कर सकती है।
- अनेक स्थानीय समस्याएँ ऐसी होती है जो जिला स्तर पर अधिक कुशलतापूर्वक और सक्रिय ढंग से सुलझाई जा सकती हैं। कुछ ऐसी समस्याएँ भी है जो जिला स्तर पर नीचे के स्तर की अपेक्षा अधिक ढंग से सुलझ सकती हैं अतः इन समस्याओं के कर्तव्यों के निर्धारण के सम्बन्ध में हमें दुराग्राही नहीं होना चाहिए।
- पंचायत राज संस्थाओं को प्रागवान बनाने और प्रोत्साहित करने के लिए उन्हें अधिक कार्यपालक अधिकार दिए जाने चाहिए।
- पंचायती राज संस्थाओं को कर लगाने के व्यापक अधिकार दिए जाने चाहिए। करो से होने वाली आय के बँटवारे के अनुपात के बारे में सुधार किया जाना चाहिए। पंचायत समितियो और जिला परिषदों को अधिकार होना चाहिए कि निर्धारित न्यूनतम और अधिकतम दरों के बीच परिवारों के आधार पर शिक्षा उप कर लगा सकें। पंचायती राज संस्थाओं के पास अपने स्वयं के वित्तीय साधन विकसित किए जाएँ ताकि वे अपने वित्तीय साधनों में वृद्धि कर, अधिक स्वतन्त्रतापूर्वक अपने विवेक के अनुसार कर्तव्यों का पालन कर सकें।
- पंचायती राज में संस्थाओं के मार्ग–निर्देशन, देख–रेख और नियन्त्रण का प्रश्न सबसे महत्वपूर्ण है। राज्य सरकारों, उनके तकनीकी अभिकरणों और जिला अधिकारियों को पंचायती राज संस्थाओं का समुचित एवं उदार ढंग से मार्ग–निर्देशन कर उन्हें प्रोत्साहित करना चाहिए।
- ग्राम सभा को वैधानिक मान्यता प्राप्त हो तथा ग्राम जीवन को प्रभावित करने वाले सभी महत्वपूर्ण मुद्दों पर ग्राम सभा में विचार–विमर्श किया जाए। ग्राम सभा में विचारणीय विषयों में पंचायत का बजट, पंचायत के काम का विवरण, योजनाओं की प्रगति, ऋण और अनुदानों का उपयोग, स्कूल और सहकारी समितियों की व्यवस्था, लेखा परीक्षण की रिपोर्ट आदि को शामिल किया जाना चाहिए।
- विभिन्न विभाग एकता का भाव विकसित करें, न कि पंचायतों के प्रति उदासीनता का भाव। गलतियों और अनियमितताओं पर रोक लगाकर, बिना बदनीयती के गलतियों पर सहानुभूतिपूर्ण विचार किया जाए। दोषी लोगों के खिलाफ कठोर कार्यवाही की जाए, चाहे वे सरकारी कर्मचारी हों या गैर–सरकारी।
- राजस्व और पुलिस सेवाओं का सहयोग सुनिश्चित किया जाए।
- नियम और कार्यवाहियाँ सुगम बनाये जाएँ। नियमों का उद्देश्य लोगों का व्यापक रूप से हित–साधन हो, न कि संस्थाओं के सहज रूप से कार्य करने में बाधा उत्पन्न करना। साथ ही नियम ऐसे होने चाहिए कि उन्हें आम आदमी समझ सके।

निष्कर्ष

अपनी अनेक कमियों और दुर्बलताओं के बावजूद पंचायती राज ग्रामवासियों की जीवन पद्धति का केन्द्र बनता जा रहा है। अशिक्षित जनता, जातिगत और धर्मगत अन्धविश्वास परम्परागत अलोकतान्त्रिक सामाजिक और परिवारिक ढाँचे, परिपक्व राजनीतिक प्रबुद्धशा की कमी आदि के कारण पंचायती राज की उपलब्धियों का कम अंकन करने वाले पंचायती राज की आलोचना करने की एक सामान्य प्रवृत्ति विकसित हो गई है। पंचायती राज व्यवस्था ने देश के राजनीतिकरण तथा आधुनिकीकरण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसके कार्यकलापों ने ग्राम्य जीवन में एक नया जागरण पैदा कर गाँव वालों को शोषित होने से बचाया है। वोट की कीमत समझी जाने लगी है, ग्रामीण जनता की राजनीति हिस्सेदारी बढ़ी है। लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकृत संस्थाएँ स्वशासन की इकाइयों के रूप में विकसित हो रही है, ग्रामीण नेतृत्व पनपता जा रहा है, गाँवों की अवेहलना करना आसान कार्य नहीं रह गया है। गाँवों के पिछड़े वर्गों में चेतना द्वारा गाँव की स्त्रियों भी राजनीतिक क्रियाकलापों में भाग लेने लगी हैं। राजनीति जागृति के साथ सामाजिक चेतना बढ़ी है, छुआछूत और भेदभाव की दीवारों के ढहने से पंचायती राज को जबरदस्त लाभ पहुँचा है। गाँवों का जागरण राज्य से स्तर की राजनीति पर दबाव डालने में सक्षम हुआ है। जातिगत, धर्मगत और अन्य हित स्थानीय दबाव–समूह के रूप में प्रकट होने लगे हैं। पंचायती राज ने गाँवों में कुछ सीमा तक साम्प्रदायिकता, भ्रष्टाचार, अव्यवस्था, संकीर्णता, मन–मुटाव आदि को बढ़ावा दिया है, लेकिन इनकी तुलना में पंचायती राज के लाभ बहुत अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हो रहे हैं।

सन्दर्भ सुची

1. अग्रवाल, प्रमोद कुमार (2015), भारत में पंचायती राज, ज्ञान गंगा, दिल्ली.
2. बैरागी, विनोद नारायण दास (2016), पंचायती राज व्यवस्था, पराग प्रकाशन, कानपुर.
3. खत्री, हरीश कुमार (2017), भारत में पंचायती राज, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल.
4. शर्मा, अरुण कुमार (1995) भारत में स्थानीय स्वशासन, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली

5. शर्मा, हरिश्चन्द्र (1993), भारत में स्थानीय प्रशासन, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर
6. मैथ्यू, जार्ज (1994), स्टेटस ऑफ पंचायती राज इन द स्टेटस ऑफ इंडिया, कंसेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, नई दिल्ली
7. सिन्हा, शिशिर (2015), सरकार का ग्रामीणों तक पहुंचने का रास्ता पंचायतें, कुरुक्षेत्र– ग्रामीण विकास को समर्पित मासिक, वर्ष–62, अंक–1, नवम्बर, 26
8. तिवारी, अर्चना (2017), ग्रामीण विकास में ग्राम पंचायतों की भूमिका, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एप्लाइड रिसर्च, वर्ष 3, अंक 7, जुलाई, पृष्ठ 1027.
9. सिंह, सुरेंद्र बहादुर (2011), पंचायती राज से बेहतर हुआ ग्रामीण प्रशासन, कुरुक्षेत्र, वर्ष 57, अंक 10, अगस्त, पृष्ठ 8.
10. यादव, शंभू नाथ (2010), निरंतर विकास और पंचायत की भूमिका, कुरुक्षेत्र, वर्ष 56, अंक 12, अक्टूबर, पृष्ठ 3.
11. सक्सेना, एन सी (2015), पंचायती राज प्रणाली का सशक्तिकरण, कुरुक्षेत्र, वर्ष 62, अंक 1 नवम्बर, पृष्ठ 5–8
12. मधुसूदन, गजेन्द्र सिंह (2015), गांवों में नवजीवन का संचार करती पंचायते, कुरुक्षेत्र, वर्ष 62, अंक 1, नवम्बर, पृष्ठ 38–42
13. मिनिस्ट्री ऑफ रूरल डेवलपमेंट, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली की 2022–23 की वार्षिक रिपोर्ट
14. 73वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1992, भारत सरकार, नई दिल्ली.
15. www.rural.nic.in